महाकवि कालिदास

जीवनवृत्त

(उत्तरांचल २००३)

समय

संस्कृत साहित्य में कविकुलगुरु के नाम से प्रसिद्ध महाकवि कालिदास का भारतीय साहित्यकारों में ही नहीं अपितु विश्व के मूर्धन्य साहित्यकारों में प्रमुख स्थान है। परन्तु अन्य प्राचीन भारतीय साहित्यकारों की ही भाँति महाकवि कालिदास के समय, जन्म-स्थान तथा जीवन के विषय में भी निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता कि ये कब और कहाँ पैदा हुए। कुछ किंवदन्तियों तथा अन्तःसाक्ष्यों के आधार पर ही थोड़ा-बहुत जाना जा सकता है।

महाकवि ने अपने जीवन के विषय में स्वयं कहीं कुछ नहीं लिखा। अनेक विद्वानों ने अपने-अपने तर्कों के आधार पर इनका काल-निर्णय किया है, परन्तु सभी एकमत नहीं हैं। इनका समय दूसरी शताब्दी ई० पू० तथा छठी शताब्दी के मध्य में माना जाता है। इनके मालविकाग्निमित्र नाटक के नायक अग्निमित्र का समय १४८ ई० पू० से १३६ ई० पू० इतिहास से प्रमाणित है। अतः यह तो निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि ये १४८ ई० पू० के बाद हुए। दूसरी ओर, छठी शताब्दी के अन्त में हर्षवर्धन के दरबारी कवि बाणभट्ट ने कालिदास की कविता की प्रशंसा की है। इस प्रकार कालिदास का समय दूसरी शताब्दी ई० पू० तथा छठी शताब्दी के मध्य में होना निश्चित है।

जीवन-परिचय (२००१)

कालिदास के जन्मस्थान के विषय में भी खींचतान मिलती है। कोई इन्हें बंगाली कहता है, तो कोई काश्मीरी। कुछ इन्हें विदर्भ का बताते हैं, तो कुछ इन्हें उज्जयिनी का निवासी मानते हैं। इनकी मृत्यु इनके मित्र कुमारदास, जो सिंहलद्वीप का निवासी था, की दरबारी वेश्या के द्वारा ५० वर्ष की अवस्था में हुई थी, ऐसा भी माना जाता है। (50)

इनके प्रसिद्ध नाटक अभिज्ञानशाकुन्तल की प्रस्तावना तथा भरतवाक्य के आधार पर इतना तो संकेत मिलता है कि ये महाराज विक्रमादित्य के राजकवि थे। इनके विषय में किंवदन्ती है कि ये बचपन में वज्रमूर्ख थे। कहा जाता है कि एक दिन ये वृक्ष की जिस शाखा को काट रहे थे उसी पर बैठे थे। उस समय कुछ पण्डितों ने किसी राजा से रुष्ट होकर उसकी विदुषी कन्या 'विद्योत्तमा' का विवाह षड्यन्त्र रचकर निपट मूर्ख कालिदास से करा दिया। जब वह कन्या अपने पति के साथ उसके घर पहुँची तो भेद खुला कि उसका पति विद्वान् नहीं अपितु वज्रमूर्ख है, उसे कुछ भी ज्ञान नहीं है। राजकुमारी ने उसे घर से निकाल दिया। वह अपमानित होकर काली देवी की कृपा से सम्पूर्ण शास्त्रों का ज्ञाता हो गया।

ज्ञान प्राप्त करके जब वह घर आया तो द्वार बन्द था। द्वार खुलवाने के लिए उसने किवाड़ों को थपथपाते हुए कहा—'अनावृत्तकपाटं द्वारं देहि।' विद्योत्तमा ने 'अस्ति कश्चिद् वाग्विशेषः' कहकर उनका स्वागत किया। उन्होंने पत्नी के शब्दों को लेकर तीन काव्यों, क्रमशः कुमारसंभव, मेघदूत और रघुवंश की रचना कर डाली।

कालिदास की कृतियाँ (२००१)

कालिदास की काव्य-प्रतिभा का परिचय उनकी कृतियों के माध्यम से मिलता है। अपने काव्योत्कर्ष की पराकाष्ठा के कारण महाकवि कालिदास का नाम उत्तरवर्ती कवियों में एक उपाधि के रूप में व्यवहृत हुआ है। इस कारण अनेक रचनाएँ इस नाम से सम्बद्ध हो गईं। विद्वानों और आलोचकों ने अध्ययन और विश्लेषण के अनन्तर आगे कही जानेवाली रचनाओं को प्रामाणिक रूप से कालिदास द्वारा रचित माना है। महाकवि की प्रसिद्धि मुख्य रूप से उनके तीन नाटकों, दो महाकाव्यों एवं दो गीतिकाव्यों पर आधारित है।

मालविकाग्निमित्र—मालविकाग्निमित्र में ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का आश्रय लेकर शुंगवंशीय नरेश अग्निमित्र तथा मालविका के प्रेम का चित्रण किया गया है। राजप्रासाद तथा प्रमदवन के सीमित क्षेत्र में घटित प्रणयकथा ही इसका प्रमुख प्रतिपाद्य है। यद्यपि पाँच अंकों में विभक्त होने के कारण यह नाटक की कोटि में ही माना जाता है किन्तु कथावस्तु के संविधान की दृष्टि से यह नाटिका के विशेष समीप प्रतीत होता है।

विक्रमोर्वशीय—विक्रमोर्वशीय ऋग्वेद, शतपथब्राह्मण तथा मत्स्यपुराण में निर्दिष्ट पुरुरवा तथा उर्वशी के प्रेम से सम्बद्ध इतिवृत्त को लेकर पाँच अंकों में निबद्ध दृश्य काव्य का त्रोटक नाम भेद है। इसमें कवित्व का विलास अधिक है, नाटकीय कौशल का कम। प्रणयोन्माद ही नाटक का प्रतिपाद्य है।

अभिज्ञानशाकुन्तल—अभिज्ञानशाकुन्तल कालिदास की नाट्य-कला का चरम परिपाक है। भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों ने भी इसे अत्युत्तम नाटक माना है। महाभारत से दुष्यन्त एवं शकुन्तला की कथा लेकर कालिदास ने सात अंकों के नाटक की सर्जना की है। महाभारत के आदिपर्व में वर्णित कथानक नितान्त नीरस और आदर्श-विहीन है। दुष्यन्त और शकुन्तला के चरित्र प्रभावपूर्ण नहीं हैं। यहाँ दुष्यन्त एक समाजभीरु, छली व्यक्ति हैं और शकुन्तला व्यवहारकुशल स्त्री। कालिदास ने अपनी नाट्य-प्रतिभा का परिचय देते हुए वस्तु विन्यास में अनेक परिवर्तन किए हैं। शाकुन्तल का कथानक दो परस्पर विरोधी मानस-प्रवृत्तियों के संघर्ष का चित्रण करता है। यह 'धर्माविरुद्धः कामोऽस्मि' का जीवन्त साहित्यिक दृष्टान्त है।

कालिदास की नाट्यकला निर्दिष्ट क्रम में ही विकसित हुई है। मालविकाग्निमित्र में कवि की नाट्यकला का अंकुरण हुआ है, विक्रमोर्वशीय में वह पुष्पित हुई है और अभिज्ञानशाकुन्तल के रूप में संस्कृत नाट्यकला के मधुरतम एवं श्रेष्ठ फल के रूप में परिणत हुई है। नाटकों के समान काव्य में भी काव्य-प्रतिभा का क्रमिक विकास परिलक्षित होता है।

ऋतुसंहार—विद्वानों की दृष्टि से कालिदास ने काव्य-कला का आरम्भ ऋतुवर्णनपरक इस लघुकाव्य से किया। इसका प्रतिपाद्य विषय प्रकृति-चित्रण है। छह सर्गों में विभक्त इस काव्य में षड्-ऋतुओं का वर्णन किया गया है। प्रकृति आलम्बन प्रधान न होकर उद्दीपन प्रधान है।

मेघदूत—संस्कृत-पण्डित-परम्परा इसे खण्डकाव्य मानती है। कीथ प्रभृति कुछ विद्वान् करुणगीति मानने के पक्ष में भी हैं किन्तु अधिकांशतः मेघदूत को भावात्मक गीतिकाव्य की श्रेणी में रखा जाता है। यह कालिदास की एक अनुपम कृति है और इसमें वियोगविधुरा पत्नी के पास यक्ष का मेघ के द्वारा सन्देश भेजा जाना वर्णित है। इसकी अत्यधिक लोकप्रियता का अनुमान इस पर लिखी गई ५० से भी अधिक टीकाओं से लगाया जा सकता है। यह पूर्वमेघ और उत्तरमेघ में विभक्त है जिसमें प्रथम में कल्पनापक्ष की अधिकता है और द्वितीय में भावनापक्ष की। मेघदूत की कलात्मक चारुता से आकृष्ट होकर संस्कृत में एक विपुल काव्यमाला की रचना हुई है जो सन्देश-काव्य के नाम से प्रसिद्ध है।

कुमारसम्भव—वर्तमान समय में उपलब्ध ग्रन्थ में सत्रह सर्ग हैं किन्तु प्रथम आठ सर्ग ही कालिदास की रचना माने जाते हैं। कालिदासीय कविता के प्रवीण पारखी मल्लिनाथ ने आठ सर्गों पर ही अपनी संजीवनी नामक टीका लिखी है। शिव-पार्वती जैसे दिव्य दम्पती के रूप तथा प्रेम का वर्णन नितान्त औचित्यपूर्ण है। लेकिन अष्टम सर्ग का सम्भोग-वर्णन आलोचकों के कटु कटाक्षों का पात्र बना है। यहाँ देवताओं के प्रणय को शुद्ध मानवी रूप दे दिया गया है। सम्भवतः काव्य में इस सम्भोग वर्णन के प्रति श्रोताओं तथा आलोचकों की अरुचि देखकर ही कालिदास ने इसे अधूरा छोड़ दिया होगा। कुमारसम्भव की कृति पूर्णतया रसवादी प्रतीत होती है तथा किसी नैतिक व्यवस्था की स्थापना इसका उद्देश्य नहीं है।

रघुवंश—यह कालिदास का सर्वोत्तम काव्य माना जाता है और इसी कारण भारतीय आलोचकों ने कालिदास के लिए रघुकार अभिधान का प्रयोग किया है। इसमें १९ सर्ग हैं जिनमें सूर्यवंशी राजाओं का वर्णन किया गया है। रघुवंश एक समग्र इतिवृत्तात्मक काव्य न होकर चरित्रों की चित्रशाला के समान प्रतीत होता है। समग्र काव्य में कालिदास की तूलिका रघु तथा राम के चरितों को सँवारने में सर्वाधिक रमी है। रघुवंश के पूर्वार्ध में रघु का आदर्श चरित्र अत्यधिक उदात्त है तथा उत्तरार्ध में राम का। रघुवंश के अनुशीलन से स्पष्टतः प्रकट होता है कि प्रकृतिरंजन के कारण राज्य की समृद्धि होती है तथा प्रकृतिहिंसन के कारण राज्य का सर्वनाश होता है। रघुवंश के उत्तरार्ध में क्रमशः पतनोन्मुख राजचरित्रों का वर्णन तथा अन्त में अग्निवर्ण के विलासितापूर्ण जीवन का अन्त दिखाकर कवि ने इस कथन की पुष्टि की है।

कालिदास की काव्यगत विशेषताएँ (काव्य-शैली; काव्यकला)

(२००१,०२,०३, उत्तरांचल २००३)

महाकवि कालिदास का काव्य-सौन्दर्य

(२००३)

कालिदास संस्कृत के ही महाकवियों में सर्वश्रेष्ठ नहीं हैं, अपितु विश्व-साहित्य के महाकवियों में भी पूर्ण स्थान रखते हैं। संस्कृत साहित्य में कालिदास ने जो अद्वितीय स्थान पाया है, उसका कारण है कवि की काव्य-प्रतिभा। भाषा, भाव, कल्पना तथा वर्णन के क्षेत्र में कवि ने जिस प्रतिभा का परिचय दिया, वैसा कम कवियों में देखने को मिलता है। कवि ने प्रकृति-चित्रण, रस-परिपाक, अलंकार-विधान एवं सुबोध भाषा-शैली की दृष्टि से जो स्थान बनाया है, वह अद्वितीय है, जैसा कहा गया है—

पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासा।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव॥

प्रकृति-चित्रण—कालिदास प्रकृति के पुजारी हैं। प्रकृति का वर्णन करते समय कवि ने प्रकृति को सजीव बना दिया। प्रकृति का मानवीकरण करके कवि ने अपनी सूक्ष्म काव्य-प्रतिभा का परिचय दिया है। कालिदास के काव्य में आकर प्रकृति सजीव चेतन सत्ता बन गई है। शकुन्तला के वियोग में हिरन घास खाना छोड़ देते हैं, मोरों ने भी नाचना छोड़ दिया और लताएँ अपने पीले-पीले पत्ते गिराकर आँसू बहाती हैं। कवि ने प्रकृति के आलम्बन और उद्दीपन दोनों ही रूपों को चित्रित किया है। रघुवंश के द्वितीय सर्ग में प्रकृति के मनोरम दृश्य दिख जाते हैं।

रस-परिपाक—कवि को सभी रसों के चित्रण में पूर्ण सफलता मिली है, परन्तु कालिदास के काव्य में शृंगार और वीर रस प्रधान हैं। कवि ने शृंगार रस के संयोग व वियोग दोनों पक्षों का सरस एवं हृदयग्राही वर्णन किया है। मेघदूत में वियोग-शृंगार अपनी चरम सीमा तक पहुँच गया है। कुमारसम्भव में संयोग-शृंगार के सात्त्विक रूप में दर्शन होते हैं। कुमारसम्भव के रति-विलाप प्रसंग में करुण रस पाठकों के हृदय को द्रवित कर देता है। रघुवंश में अज-विलाप का प्रकरण पाठकों को बिना रुलाए नहीं रह पाता।

अलंकार-विधान—(उपमा कालिदासस्य)—कालिदास ने अपने काव्यों में अलंकार-विधान को इस खूबी से रखा है कि उन्हें आलोचकों ने उपमा-सम्राट् स्वीकारा है। कालिदास ने अपने शब्दों में वैसे तो सभी अलंकारों को स्थान दिया है, फिर भी कवि को अनुप्रास, उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा एवं अर्थान्तरन्यास अधिक प्रिय हैं।

कवि का अप्रस्तुत विधान हृदयग्राही, विलक्षण एवं सर्वथा मौलिक होता है। कालिदास की उपमाएँ तो इतनी सटीक एवं विषय तथा परिस्थिति के अनुकूल हैं कि उनके बारे में 'उपमा कालिदासस्य' ही प्रसिद्ध हो गया। कुछ उपमाएँ द्रष्टव्य हैं—"सञ्चारिणीदिपशिखेव रात्रौ", "दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या", "श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्", "जुगाप गोरूपधरामिवोर्वीम्", "छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत्"।

कालिदास का उपमा-सौन्दर्य

(२००३)

"उपमा कालिदासस्य"

(२००३)

आलंकारिकों ने अलंकार की काव्य के उत्कर्षाधायक तत्त्व के रूप में व्याख्या की है। शब्द और अर्थ युगल का नाम काव्य है। फलतः अलंकार तीन प्रकार के हैं—१. शब्दालंकार, २. अर्थालंकार और ३. शब्दार्थोभयालंकार। उपमा अलंकार अर्थालंकार है।

कालिदास की उपमा प्रसिद्ध है—'उपमा कालिदासस्य' मल्लिनाथ ने कालिदास के उपमा-प्रयोग पर अपना मत इस रूप में व्यक्त किया है—'प्रायिकश्चोपमालङ्कारः कालिदासोक्तकाव्यादौ।'

रघुवंश के द्वितीय सर्ग में प्रारम्भ से अन्त तक उपमा के सुन्दर से सुन्दरतर और सुन्दरतम प्रयोग देखे जा सकते हैं। उदाहरणार्थ—

तस्याः खुरन्यासपवित्रपांसुमपांसुलानां धुरि कीर्तनीया।
मार्गं मनुष्येश्वरधर्मपत्नी श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्॥

में उपमा शास्त्रीय सीमाओं का बोध कराती है। यहाँ 'मनुष्येश्वरधर्मपत्नी' उपमेय, 'स्मृति' उपमान, 'इव' वाचक शब्द और 'अनुगमन क्रिया' साम्य है। इसके अतिरिक्त 'मार्ग' उपमेय और 'अर्थ' उपमान है। श्लोक में उपमान और उपमेय समानलिंग का प्रयोग चारुतावर्धक है। उपमा के अन्य उदाहरण—

स्थितः स्थितामुच्चलितः प्रयातां निषेदुषीमासनबन्ध धीरः ।
जलाभिलाषी जलमाददानां छायेव तां भूपतिरन्वगच्छत् ॥

में उपमा लौकिक भाव-बोध में गहरी उतरती दिखाई देती है। सम्पूर्ण श्लोक में चारुत्व का केन्द्रबिन्दु उपमा प्रयोग ही है। कालिदास ने साहचर्य द्योतित करने के लिए 'छाया' को उपमान के रूप में लिया है। छाया अपने आधार का पूरा-पूरा अनुकरण करती है—यही बात इस श्लोक में दिखाई गई है।

निम्नलिखित श्लोक में पशुजगत् से उपमान छाँटा गया है—

स न्यस्तचिह्नामपि राजलक्ष्मीं तेजोविशेषानुमितां दधानः ।
आसीदनाविष्कृतदानराजिरन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः ॥

निम्नलिखित श्लोक में भौगोलिक परिवेश से उपमान लिया गया है—

पुरस्कृता वर्त्मनि पार्थिवेन प्रत्युद्गता पार्थिवधर्मपत्न्या ।
तदन्तरे सा विरराज धेनुर्दिनक्षपामध्यगतेव सन्ध्या ॥

यहाँ 'सन्ध्या' उपमान 'सा' (नन्दिनी) उपमेय दोनों से स्त्रीलिंग का साम्य मनोहर है। इसी प्रकार 'क्षपा' उपमान और 'पार्थिवधर्मपत्नी' उपमेय में लिङ्गसाम्य द्रष्टव्य है। यद्यपि 'दिन' उपमान और 'पार्थिव' उपमेय में लिंगसाम्य नहीं है तथापि निसर्गचित्रण के कारण उपमा की रमणीयता को कोई आँच नहीं आती।

संक्षेप में कह सकते हैं कि कालिदास को जहाँ से भी मनोरम और अर्थ-सम्प्रेषण में समर्थ उपमान मिले हैं वहीं से उन्होंने उसे लिया है और साम्यबोध के धरातल पर उतारने का प्रयत्न किया है, जिससे उनकी उपमा में जीवनशक्ति स्फुरित होती दिखाई देती है। डा० रामजी उपाध्याय के शब्दों में "कालिदास की उपमा का क्षेत्र निःसीम है। अखिल ब्रह्माण्ड के सर्वोच्च शिखर से, पाताल के निगूढतम गह्वर से, पाठक के घर से और खेती-बारी से भी वे सटीक उपमानों को ढूँढ-ढूँढकर अपने काव्य को सजाने में सफल हैं।"

कालिदास की भाषा शैली (२००१)

महाकवि कालिदास के रघुवंश महाकाव्य का मंगलाचरण श्लोक, जिसमें उन्होंने वागर्थ की प्रतिपत्ति के लिए भगवान् शंकर और देवी पार्वती की वन्दना की है, हमें यह निष्कर्ष निकालने के लिए प्रेरित करता है कि वे भाषा के प्रति सावधान रहनेवाले महाकवि हैं। शब्द और अर्थ के सम्यक् प्रयोग से; वागर्थप्रतिपत्ति से; वर्ण्यवस्तु इस चारुता के साथ उन्निद्र होती है कि काव्य अनन्तकाल तक के लिए सहृदय समाज में प्रतिष्ठित हो जाता है।

हम अधिक विस्तार में न जाकर रघुवंश के द्वितीय सर्ग के आधार पर ही कालिदास की भाषा-शैली की समीक्षा करने पर पाते हैं कि कालिदास ने सम्पूर्ण वर्ण्यविषय को काव्योपयोगी भाषा से ऐसा सजाया है कि सम्पूर्ण वर्णन हठात् श्रोता और अध्येता को अपनी ओर आवर्जित करने लगते हैं। भाषा ऐसी सरल और प्रासादिकता लिए हुए कि समस्त वर्ण्यवस्तु जाग्रती-सी दिखाई देती है। सर्ग प्रारम्भ करने पर फिर छोड़ने की इच्छा नहीं होती।

शब्दसौष्ठव और अर्थ-औदार्य ने कालिदास की काव्यभाषा का शृंगार किया है। मल्लिनाथ ने अनेक स्थलों पर कालिदास के शब्द-प्रयोगों की व्यंजना की ओर संकेत किया है। उदाहरण के लिए वे—

अथ प्रजानामाधिपः प्रभाते जायाप्रतिग्राहितगन्धमाल्याम् ।
वनाय पीतप्रतिबद्धवत्सां यशोधनो धेनुमृषेर्मुमोच ॥

इस प्रथम श्लोक में ही 'जाया' पद के प्रयोग पर टिप्पणी करते हैं कि यहाँ इस पद का प्रयोग जतलाता है कि सुदक्षिणा में पुत्रजनन की योग्यता है—'जायापदसामर्थ्यात् सुदक्षिणायाः पुत्रजननयोग्यत्वम् अनुसन्धेयम्'। 'जाया' पद की व्युत्पत्ति से पता चलता है कि वह स्त्री 'जाया' कहलाती है जिसमें सन्तान उत्पन्न हो सके—'जायतेऽस्याम् इति जाया। 'जाने-प्रादुर्भावे' धातु से 'यक्' प्रत्यय होकर जाया शब्द निष्पन्न होता है। मल्लिनाथ 'यशोधन' शब्दप्रयोग की भी प्रशंसा करते हुए कहते हैं—'इत्यनेन पुत्रवत्ताकीर्तिलोभाद् राजानर्हे गोरक्षणे प्रवृत्त इति गम्यते।'

भाषा का मूल शब्दप्रयोग पर आधृत होता है। कालिदास शब्द प्रयोग के असमान कलाकार हैं। रघुवंश-द्वितीय सर्ग के तेरहवें श्लोक में वे सीधे-सीधे 'शीतः पवनः' शब्द न कहकर 'गिरिनिर्झराणां तुषारैः पृक्तः पवनः' कहते हुए या 'मन्दः पवनः' और 'सुरभिः पवनः' न कहकर 'अनोकहाकम्पितपुष्पगन्धी पवनः' कहकर वे

प्रस्तूयमान वस्तु को जिस जीवन्तता के साथ उतारते हैं वह अन्यत्र कठिनाई से प्राप्त होती है। 'आचारपूतं पवन सिषेवे' की व्यंजना को मल्लिनाथ ने इन शब्दों में रखा है—"आचारपूतत्वात् स राजा पवनस्यापि सेव्य आसीदिति भावः"।

व्यक्तिविवेककार महिमभट्ट ने छत्तीसवें श्लोक के अन्तिम पाद में आए 'स्कन्दस्य मातुः पयसां रसज्ञः' समास न करने की प्रशंसा की है—'विधेयार्थतया प्राधान्येन विवक्षितं विशेष्येण सह समासे न प्रत्यवरीकृतम्। यथा च—स्कन्दस्य मातुः पपसां रसज्ञः इति।

वर्णन को प्रभावशाली बनाने के लिए कालिदास की भणिति-भंगिमा के लिए 'स्थितः स्थिताम्' (श्लोक-६), 'तदीथमाक्रन्दितम्' (श्लोक-२८) या 'निशम्यदेवानुचरस्य' (श्लोक-५२) को उदाहरण के रूप में उपन्यस्त किया जा सकता है।

संक्षेप में कालिदास की भाषा सरल, सुबोध तथा प्रसादगुण-पूर्ण है। इसमें क्लिष्टता तथा दुरूहता का अभाव है। भाषा पर कवि का पूर्ण अधिकार है। भावाभिव्यक्ति के लिए वे शब्द खोजते नहीं अपितु अनुकूल शब्द आपसे आप निकले चले आते हैं। कालिदास की कविता वैदर्भी रीति में लिखी गई है और उसमें दीर्घकाय समासों का अभाव है। यद्यपि कहीं-कहीं व्याकरण के नियमों का उल्लंघन भी दिखाई देता है तथापि ऐसे स्थान बहुत ही कम हैं। कालिदास की भाषाशैली में माधुर्य और प्रसाद गुण सर्वत्र पाया जाता है। व्यंजना शक्ति की प्रधानता से काव्य में सजीवता आ गई है।

संक्षेप में, कालिदास की शैली कृत्रिमता से रहित, आकर्षक और काव्य के कमनीय पक्षों से ओतप्रोत है। उनकी काव्य-कला अनुपम और अनूठी है।